THE ECONOMIC TIMES

Date: 21-04-25

Int'l Shipping Charts Course for Net Zero

ET Editorials

International shipping made history in London this month, becoming the first industrial sector to agree to internationally binding legal targets for reducing GHG emissions to zero by or around 2050'. The sector accounts for 3% of global GHG emissions every year. The agreement could also provide a much-needed push to other ancillary industrial sectors to go green.

Agreement by the International Maritime Organisation (IMO), comprising 176 member states, relies on a combination of emissions pricing and trading, and gradually tightening global fuel standards to reduce emissions by 30% by 2030, and up to 80% by 2040, before reaching 0 around mid-century. While the agreement is far from perfect, the decision reflects a compromise between small island nations advocating a carbon levy on all emissions, with standards being tightened over time, and a carbon-trading system that would generate revenues and ease the transition. The legally binding policy framework will generate revenues that will be available to developing and least-developed countries, to decarbonise shipping and allied infrastructure. The agreement, which India voted for, could provide the necessary boost for its green hydrogen programme. However, there are concerns that the IMO agreement makes it possible to continue using fossil fuels, such as LNG, and boost unsustainable biofuels that could lead to deforestation or food security challenges.

Predictably, the US did not participate. Instead, it threatened reciprocal charges against any effort to put a price on emissions and, again predictably, sought to derail talks. With the world on the edge and global fragmentation undermining col- lective efforts, the IMO agreement is welcome news for the environment, and multilateralism.

THE HINDU

Date: 21-04-25

Enabling legislation

Nomination of persons with disabilities to local bodies is a pioneering move

Editorial

Affirmative action remains one of the most effective ways of addressing historical wrongs and systemic deprivation. The most recent attempt to address deep-rooted discrimination against persons with disabilities in Tamil Nadu is likely to have a far-reaching impact for the community. Chief Minister M.K. Stalin tabled two Bills in the Assembly last week to increase the number of persons with disabilities in all local bodies in the State. While one Bill seeks to nominate persons with disabilities to all town panchayats, municipal councils and municipal corporations with amendments to the Tamil Nadu Urban Local Bodies Act, the second intends to bring into law the decision to nominate one per- son with disabilities to all village panchayats, panchayat union councils and district panchayats by amending the Tamil Nadu Panchayats Act. Mr. Stalin said once these Bills are enacted, there would be guaranteed posts for 650 persons with disabilities in urban local bodies, 12,913 in village panchayats, and 388 in panchayat unions, besides 37 persons with disabilities in district panchayats. At the moment, there are only 35 persons with disabilities in urban local bodies, he informed the House. Besides ensuring dignity for persons with disabilities, and eroding stigma and discrimination, this change would empower the community, involving their representatives in decision-making at the grassroots level.

It is the role of the government to take along its citizens, particularly those who may have an impediment that might come in the way of their harnessing equal opportunities as the rest of the population. After the 73rd and 74th amendments to the Constitution that allowed for one-third representation of all seats in panchayati raj institutions and urban local bodies to be reserved for women, some States, including Tamil Nadu, increased this to 50%. Since then, the very raucous and long-drawn-out battle was finally resolved in 2023, with the Women's Reservation Act being passed for 33% reservation for women in the Lok Sabha and State Legislative Assemblies. This will be effective after the publication of the Census conducted following the Act's commencement. Meanwhile, Tamil Nadu's effort to appoint persons with disability is the first such effort in the country at bringing a marginalised community not merely into the mainstream but as leaders of society, thus raising their profile and larger acceptance, besides bringing change that will benefit the rest of the society. Given the initial experience of implementing women's reservation in panchayati raj, where women panchayat leaders were de facto replaced by the husband in decision-making, it is important that the government ensures the benefit truly reaches the intended - in this case, persons with disabilities.

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 21-04-25

जलवायु परिवर्तन: अब हाशिये का मुद्दा

सुनीता नारायण

यह ऊर्जा बदलाव का वक्त नहीं है बल्कि यह ऊर्जा में वृद्धि करने का वक्त है। यह बात अमेरिका के ऊर्जा मंत्री क्रिस राइट ने पिछले महीने ह्यूस्टन में हुए सबसे बड़े ऊर्जा सम्मेलनों में से एक सीईआरएवीक में तालियों की गड़गड़ाहट के बीच कही। पूरा कमराऊर्जा कंपनियों के दिग्गज प्रमुखों और क्षेत्र के विशेषज्ञों से भरा हुआ था। पूरे हफ्ते पर चले सम्मेलन में भाग लेने के बाद यह बात मुझे अच्छी तरह से स्पष्ट हो गई कि हमारी दुनिया अब बदल गई है।

यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि जलवायु परिवर्तन नीतियों को क्यों और किस तरह से पूर्ण रूप से खारिज किया जा रहा है जबकि दुनिया तेजी से गर्म हो रही है और सभी जगह मौसम का विनाशकारी प्रभाव देखने को मिल रहा है। यह सिर छिपाकर इस भ्रम में बने रहने का समय नहीं है कि डॉनल्ड ट्रंप प्रशासन की ऊर्जा नीति अपनी और हमारी दुनिया में बड़े बदलाव नहीं लाएगी।

सवाल यह है कि आखिर इस बदलाव का कारण क्या है ? पहला, अमेरिका का सकल राष्ट्रीय ऋण 36 लाख करोड़ डॉलर तक पहुंच गया है और ब्याज भुगतान, देश के रक्षा खर्च से भी अधिक है। शायद इसीलिए अमेरिकी ऊर्जा मंत्री के शब्दों में इसका जवाब ‘औद्योगिकी गतिविधियों का कम होना' नहीं बल्कि 'दोबारा औद्योगीकरण' करना है।

घरेलू क्षेत्रों में विनिर्माण पर जोर देने पर अधिक ऊर्जा खपत और अधिक ऊर्जा बुनियादी ढांचे की आवश्यकता होगी। दूसरा, चीन ने आपूर्ति श्रृंखलाओं और इलेक्ट्रिक वाहनों के निर्माण से लेकर सौर ऊर्जा तक कई नए क्षेत्रों में बढ़त हासिल कर ली है। ट्रंप प्रशासन का कहना है कि वह आर्टिफिशल इंटेलिजेंस (एआई) की दौड़ में चीन से पीछे नहीं रह सकता है । इसका मतलब है अब तक की सबसे तेज रफ्तार से ऊर्जा डेटा केंद्र बनाए जाएंगे। देश में लगभग 5,000 डेटा केंद्र हैं जो इसकी ग्रिड आधारित बिजली का 3 फीसदी इस्तेमाल करते हैं। इसके तेजी से बढ़ने की उम्मीद है और अनुमान है कि इस दशक के अंत तक डेटा केंद्र 8-12 फीसदी बिजली की खपत करेंगे। इसका मतलब है कि अधिक बिजली उत्पादन करना होगा ।

अब जब देश उत्पादन के लिहाज से अपने चरम वृद्धि दर पर पहुंच गया है तब बिजली की मांग लगभग स्थिर हो गई । लेकिन अब इसके फिर से बढ़ने की उम्मीद है। अब इस 'नई' बिजली उत्पादन का स्रोत क्या होगा ? ट्रंप प्रशासन का कहना है कि वह इस बिजली आपूर्ति के लिए अक्षय ऊर्जा पर निर्भर नहीं रह सकता है। क्रिस राइट ने सम्मेलन में मौजूद श्रोताओं को था कि भारी निवेश के बावजूद अक्षय ऊर्जा ने अमेरिका की ऊर्जा मांग का केवल 3 फीसदी ही पूरा किया और इसलिए ऊर्जा परिवर्तन वास्तविक नहीं है। यह बात निश्चित रूप से भ्रामक है क्योंकि बिजली उत्पादन के मामले में अक्षय ऊर्जा ने अब अमेरिका में कोयले को पीछे छोड़ दिया है जो पिछले वर्षों में बिजली में 15-17 फीसदी योगदान दे रही है। लेकिन अगर परिवहन और उद्योग में तेल की

खपत सहित सभी ऊर्जा को माप के रूप में लिया जाए तो ऊर्जा मिश्रण में अक्षय ऊर्जा की हिस्सेदारी कम हो जाती है।

लेकिन ट्रंप प्रशासन के लिए यह सिर्फ शब्दों का खेल नहीं है । वह इस बात पर दृढ़ है कि पिछली सरकार की ऊर्जा नीतियों को बदलने की आवश्यकता है, जो 'सीमित जलवायु परिवर्तन पर केंद्रित' थीं। यह भी कहा गया है कि इससे बिजली की लागत में वृद्धि हुई जिससे परिवारों पर बोझ बढ़ गया है। (हालांकि इससे जुड़े कोई आंकड़े नहीं हैं जो इसकी पुष्टि करें लेकिन यह खेल वास्तव में धारणा और विश्वास से जुड़ा है) । ऐसे में ऊर्जा वृद्धि, प्राकृतिक गैस (जीवाश्म ईंधन) से होगी और कोयले की वापसी होगी। दिलचस्प बात यह है कि अमेरिकी प्रशासन इसके उत्पादन को बढ़ाने के लिए सभी जरूरी चीजें तेजी से कर रहा है। इससे ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन बढ़ेगा, लेकिन ऊर्जा मंत्री ने कहा है कि कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड की तरह प्रदूषक नहीं है । जलवायु परिवर्तन अमेरिका की योजनाओं में महज एक फुटनोट की तरह ही हाशिये का मुद्दा है। हालांकि इसका मतलब यह नहीं है कि जलवायु परिवर्तन को पूरी तरह से नजरअंदाज किया जा रहा है। अमेरिका के मुताबिक प्राकृतिक गैस का निर्यात, भारत जैसे स्थानों पर कोयले की जगह लेगा क्योंकि यह कम प्रदूषित है और मौजूदा अमेरिकी प्रशासन द्वारा प्राकृतिक गैस के निर्यात पर जोर दिया जा रहा है।

प्राकृतिक गैस उत्पादन और खपत से मीथेन उत्सर्जन को कम करने के लिए निवेश की भी कुछ चर्चा चल रही है लेकिन इसमें ज्यादा गंभीरता नहीं है क्योंकि इस प्रशासन में जलवायु कार्रवाई के लिए वास्तव में कोई प्रेरणादायक बातें नहीं बची हैं। अब पूरा ध्यान परमाणु ऊर्जा पर है विशेष रूप से छोटे मॉड्यूलर संयंत्रों पर, जो डेटा केंद्रों को स्थानीय स्तर पर बिजली की आपूर्ति कर सकते हैं।

चीन (और रूस) सैकड़ों गीगावॉट वाले परमाणु संयंत्र बना रहा है और यह उम्मीद है कि अमेरिका भी फ्यूजन या फिजन परमाणु प्रौद्योगिकी के साथ इसमें शामिल होगा। लेकिन एक बाद स्पष्ट है कि ग्रीन हाइड्रोजन बिजली का वादा ठंडे बस्ते में चला गया है । इसलिए, बात वापस जीवाश्म ऊर्जा पर आ गई है और इस बार दुनिया को जलवायु खतरे में ले जाने की अमेरिका की जिम्मेदारी के लिए कोई माफी नहीं होगी ।

यही अहम बात है। वर्ष 2030 तक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में प्रस्तावित 50 फीसदी की कमी के बजाय पूरी संभावना है कि देश अपना उत्सर्जन बढ़ाएगा। तथ्य यह है कि अमेरिका पहले ही वैश्विक कार्बन बजट के अपने हिस्से से अधिक का उपयोग कर चुका है और अब यह और अधिक उपयोग करेगा।

सवाल यह है कि बाकी दुनिया का क्या होगा खासतौर पर भारत या अफ्रीका जैसे देशों का जिन्हें विकास के लिए अधिक ऊर्जा संसाधनों की आवश्यकता है? योजना यह थी कि अमेरिका जैसे देश जीवाश्म ईंधन के इस्तेमाल से बाहर निकलकर अपना हिस्सा कम करेंगे। लेकिन अब जब अमेरिका पूरे जोर के साथ इसमें वापसी करेगा तब दुनिया को 1.5 डिग्री सेल्सियस तापमान वृद्धि से नीचे रखने की सुरक्षा का लक्ष्य लगभग असंभव लगता है।

जनसत्ता

Date: 21-04-25

विवादों के घेरे

संपादकीय

अमेरिका में जबसे डोनाल्ड ट्रंप ने सत्ता संभाली है, उनका हर कदम विवादों में घिर जाता है। अभी हावर्ड विश्वविद्यालय का अनुदान रोकने पर विवाद थमा भी न था कि विभिन्न विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों के एक हजार से अधिक अंतरराष्ट्रीय विद्यार्थियों का वीजा रद्द किए जाने को लेकर नया विवाद छिड़ गया है। इन विद्यार्थियों में हावर्ड, स्टैनफोर्ड, मैरीलैंड और ओहियो स्टेट यूनिवर्सिटी जैसे सार्वजनिक संस्थानों के विद्यार्थी भी शामिल हैं। बहुत सारे विद्यार्थियों का कहना है कि उन्हें गलत तरीके से बाहर निकाला जा रहा है। उन्होंने अमेरिकी विदेश मंत्रालय की इस कार्रवाई को अदालतों में चुनौती दी है। मगर विदेश मंत्रालय का कहना है कि कानून का उल्लंघन करने वाले विद्यार्थियों को सजा भुगतनी पड़ेगी, उन्हें देश से निकाला जा सकता है। अमेरिकी विदेश विभाग के इस कदम से उन विद्यार्थियों का भविष्य अंधकारमय हो गया है। उन्हें बीच में अपनी पढ़ाई छूटने का भय सताने लगा है। इन विद्यार्थियों में सबसे अधिक संख्या भारतीयों की है, उसके बाद चीनी विद्यार्थियों की संख्या है। शैक्षणिक संस्थानों का कहना है कि कुछ विद्यार्थियों के खिलाफ यातायात उल्लंघन जैसे पुराने मामलों के आधार पर कार्रवाई की गई है, जबकि कुछ विद्यार्थियों ने फिलिस्तीन के समर्थन में हुए आंदोलन हिस्सा लिया था।

सही है कि कोई भी देश बाहरी नागरिकों को इस बात की इजाजत नहीं दे सकता कि वे वहां के नियम-कायदों का उल्लंघन करें। अमेरिकी विदेश विभाग इस बात को लेकर सख्त है कि बाहरी विद्यार्थी शैक्षणिक संस्थानों के परिसरों तक सीमित रहें और अमेरिकी कानूनों का पालन करें। पहले ही ट्रंप प्रशासन की सख्ती और कटौती के कारण मार्च से अब तक विद्यार्थी वीजा में करीब तीस फीसद की कमी आई है। मगर अब वहां पढ़ने गए विद्यार्थियों के खिलाफ पुराने मामले तलाश कर उन्हें बाहर करने का अभियान चलेगा, तो स्वाभाविक रूप से उनमें भय और अनिश्चितता का वातावरण बनेगा। भारत आदि देशों से बहुत सारे विद्यार्थी इसलिए अमेरिकी विश्वविद्यालयों और संस्थानों में दाखिला लेते हैं कि वहां पढ़ाई का स्तर बहुत अच्छा है और वहां से डिग्रियां लेकर उन्हें बेहतर नौकरियों के अवसर खुल जाते हैं। मगर ट्रंप प्रशासन की नई नीतियों के कारण बाहरी विद्यार्थियों का प्रवेश काफी कम हो जाएगा। जाहिर है, इससे वहां के संस्थानों पर भी असर पड़गा। पहले ही

डोनाल्ड ट्रंप एच-1 वीजा पर सख्ती को लेकर विरोध झेल चुके हैं, अब विद्यार्थी वीजा पर भी वैसा ही वातावरण बनता दिखने लगा है।

ऐसा नहीं कि अमेरिकी शैक्षणिक संस्थानों में पढ़ने गए दूसरे देशों के विद्यार्थी पहले किसी गफलत में या किन्हीं अन्य कारणों से कानूनों का उल्लंघन नहीं कर बैठते थे, पर तब उन्हें इस तरह निर्वासन की धमकी कभी नहीं झेलनी पड़ी। अब जिस तरह उन्हें देश छोड़ने को कहा जा रहा है, उससे ट्रंप प्रशासन की राजनीति ही जाहिर होती है। समान शुल्क संबंधी नीति के चलते ट्रंप अभी गंभीर विवादों में घिरे हुए हैं, जिसे लेकर खुद अमेरिकी लोग सड़कों पर उतर चुके हैं दुनिया में शायद ही ऐसा कोई शासक हो, जिसे इस तरह अपने हर फैसले पर विरोध का सामना करना पड़ा हो मगर ट्रंप अब भी शायद थोड़ा ठहर कर विचार करने और फिर आगे बढ़ने के सिद्धांत पर अमल करते नजर नहीं आ रहे। लोकतंत्र में जब भी एक व्यक्ति के मनमाने फैसले सब पर थोपे जाने लगते हैं, तो इसी तरह विवाद पैदा होते हैं।

Date: 21-04-25

संस्कृति का संरक्षण

संपादकीय

दुनिया भर में अतीत की घटनाओं, समकालीन उपलब्धियों, सामाजिक- सांस्कृतिक ढांचों आदि के बारे में जितना भी जानना - समझना संभव हो सका है, उसका सबसे अहम जरिया उन संदर्भों का दस्तावेजीकरण है। यों हर दौर में किसी न किसी रूप में तत्कालीन संदर्भों को दर्ज और संरक्षित किया जाता रहा है। इसी क्रम में आज संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन यानी यूनेस्को अपने 'मेमोरी आफ वर्ल्ड' यानी विश्व स्मृति रजिस्टर में उन अहम दस्तावेजों को शामिल किया जाता है, जिनका वैश्विक महत्त्व है और जो दुनिया भर के लोगों के लिए उपयोगी हैं। इस क्रम में विश्व धरोहर दिवस के मौके पर भारत के लिए एक बार फिर गर्व का क्षण सामने आया जब यूनेस्को ने भगवदगीता और भरत मुनि के नाट्यशास्त्र को विश्व स्मृति रजिस्टर में शामिल किया। इन ग्रंथों का महत्त्व स्वयंसिद्ध रहा है। अब इन्हें यूनेस्को की सूची में दर्ज किए जाने को दरअसल भारत की समृद्ध संस्कृति को वैश्विक स्तर पर मिल रही मान्यता के तौर पर देखा जा सकता है।

जाहिर है, यह भारत की सांस्कृतिक विरासत के लिए एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। भगवदगीता और नाट्यशास्त्र सहित अब हमारे देश के चौदह अभिलेखों को यूनेस्को के विश्व स्मृति रजिस्टर में शामिल किया जा चुका है। इस रजिस्टर में दुनिया के उन ऐतिहासिक दस्तावेजों, पांडुलिपियों, दुर्लभ पुस्तकों, चित्रों, फिल्मों, आडियो रिकार्डिंग आदि को शामिल किया जाता है, जिनका ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और सामाजिक महत्व होता है। इस क्रम में भगवतगीता और नाट्यशास्त्र भी दुनिया की धरोहरों में दर्ज हो गए हैं और इससे अतीत के इन विरासती ग्रंथों को सुरक्षित रखने में भी मदद मिल सकेगी। गौरतलब है कि भगवदगीता एक प्रतिष्ठित धर्मग्रंथ और आध्यात्मिक मार्गदर्शक है। वहीं नाट्यशास्त्र में संगीत के साथ-साथ साहित्य की कई विधाओं और प्रदर्शन कलाओं को सूक्ष्मता से दर्शाया गया है। ये ग्रंथ भारत की बौद्धिक और सांस्कृतिक पहचान के प्रमुख स्तंभ रहे हैं। यूनेस्को की सूची में शामिल होने के बाद स्वाभाविक ही वैश्विक स्तर पर इन ग्रंथों के जरिए भारतीय संस्कृति और कलात्मक उत्कृष्टता को जानने-समझने में लोगों की रुचि बढ़ेगी।

Live हिन्दुस्तान.com

Date: 21-04-25

अंतरिक्ष में जीवन

संपादकीय

कैंब्रिज विश्वविद्यालय के खगोलविदों ने सौर मंडल के बाहर जैविक गतिविधियों के मजबूत संकेत मिलने की जो घोषणा की है, उसकी पूरी दुनिया में चर्चा हो रही है। खगोलविदों ने के2-18 बी नामक एक ग्रह की मौजूदगी का पता लगाया है, जहां जीवन की संभावना के संकेत मिल रहे हैं। बहुत दूर स्थित ग्रह का अध्ययन करके खगोलविदों ने बताया है कि इस ग्रह के वायुमंडल में एक या एक से अधिक ऐसे अणु मौजूद हो सकते हैं, जो वहां जीवित चीजों के होने का संकेत दे रहे हैं। कैंब्रिज के वैज्ञानिकों को अपनी इस खोज पर और काम करना चाहिए। ध्यान देने की बात है कि इस घोषणा को ऐसे अन्य शोधकर्ताओं ने संदेह के साथ देखा है, जो एक्सोप्लैनेट वायुमंडल में ऐसे बायोसिग्नेचर का अध्ययन करते हैं। मैरीलैंड के बाल्टीमोर में जॉन्स हॉपकिन्स विश्वविद्यालय के खगोलशास्त्री स्टीफन श्मिट कहते हैं, जो प्रमाण मिले हैं, वे मजबूत नहीं हैं। एक अन्य वैज्ञानिक ने तो साफ तौर पर कहा है कि यह निश्चित रूप से जीवन होने का संकेत नहीं है। बहरहाल, नई खोज पर जो सवाल उठे हैं, उनसे निराश होकर बैठने के बजाय पड़ताल को जारी रखना चाहिए।

वास्तव में, खगोलविदों को धरती के परे जीवन खोजते हुए अभी तक अमूमन निराशा ही हासिल हुई है। विज्ञान ने एलियन होने का सपना तो दिखा रखा है, लेकिन उसका साकार होना अब कई वैज्ञानिकों को कठिन लगता है। नेचर पत्रिका में प्रकाशित इस शोध के अनुसार, धरती से परे जीवन के बारे में दावे के साथ अभी भी कुछ कहना कठिन है। हम जीवन के सबूत खोजने से अभी काफी दूर हैं। हां, संभावनाएं जरूर हैं, जिनका पीछा वैज्ञानिकों को लगातार जारी रखना चाहिए। वास्तव में, ताजा प्रकरण में वैज्ञानिकों को नया क्या मिला है? विशालकाय जेम्स वेब स्पेस टेलीस्कोप का उपयोग करते हुए, कैंब्रिज टीम ने के2-18बी के वायुमंडल में डाइमिथाइल सल्फाइड नामक अणु के संकेत मिलने की सूचना दी है, जो एक तीखी गंध वाला यौगिक है, जिसको बैक्टीरिया द्वारा उत्पादित किया जा सकता है। ध्यान रहे, जिस ग्रह पर जीवन की संभावना है, वह नेपच्यून या वरुण ग्रह से भी छोटा है। यह ग्रह पृथ्वी से लगभग 38 पारसेक की दूरी पर स्थित है। एक पारसेक 3.26 प्रकाश वर्ष के बराबर होता है । के2-18 बी ग्रह पर जिस अणु या रसायन की संभावना है, वह पृथ्वी पर कुछ समुद्री जीवों द्वारा उत्पादित होते हैं। ऐसे ही संकेत साल 2023 में भी मिले थे और अब नए सिरे से प्रमाण हाथ लगे हैं । सुदूर ग्रह पर स्थित किसी तत्व या रसायन को पृथ्वी पर रहते हुए टेलीस्कोप की मदद से देख पाना अपने आप में काफी दिलचस्प है, पर ऐसे किसी भी अध्ययन को अपने स्तर पर पुख्ता करने के बाद ही लोगों को सूचना देनी चाहिए। ऐसे वैज्ञानिकों को कोई नया तथ्य पेश करने के बाद उठने वाले सवालों के लिए भी तैयार रहना चाहिए।

एलियन से जुड़ा विज्ञान केवल दावे के आधार पर न चले, तो ही अच्छा है। एलियन आज के समय में भी विज्ञान कम है और साहित्य ज्यादा। दरअसल, हम इंसानों की एक सीमा हो गई है। पिछले पचास साल से ज्यादा हो गए, हम चांद पर नहीं जा पाए हैं। पृथ्वी पर रहते हुए एलियन या किसी ग्रह पर जीवन खोजना आसान नहीं है और इस खोज में अब ज्यादा गंभीरता आनी चाहिए। बेशक, के2-18बी जैसे 5,800 से ज्यादा ग्रह खोजे गए हैं, इनमें से अगर यह ग्रह खास दिख रहा है, तो वैज्ञानिकों को ज्यादा प्रमाण के साथ सामने आना चाहिए।

Date: 21-04-25

लोकतंत्र में हर स्तंभ अपनी सीमाओं का करे सम्मान

हितेश शंकर, (वरिष्ठ पत्रकार व संपादक)

भारतीय लोकतंत्र की नींव में ईंट की तरह जड़ा है संविधान का वह सिद्धांत, जो विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच सत्ता के सूक्ष्म संतुलन की बुनियाद रखता है। यह संतुलन अक्सर न्यायपालिका की 'सक्रियता' और 'संयम' के बीच झूलता रहा है। हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनुच्छेद-201 की प्रक्रिया में

पारदर्शिता और तर्कसंगतता के मानदंड जोड़ने का निर्णय इसी झूलते हुए लोकतांत्रिक पेंडुलम को एक नई दिशा देने का प्रयास दिखता है।

अनुच्छेद-201 का सरल अर्थ यह है कि यदि कोई राज्य विधेयक राज्यपाल द्वारा राष्ट्रपति के विचारार्थ भेजा जाता है, तो राष्ट्रपति के पास तीन विकल्प होते हैं- विधेयक को स्वीकृति देना, अस्वीकार करना या उसे अनिश्चित काल के लिए लटकाए रखना। दशकों से यह प्रक्रिया कार्यपालिका के विवेक पर निर्भर रही है, जहां न तो निर्णय लेने की कोई समय-सीमा है और न ही कारण बताने की बाध्यता। मगर अभी सर्वोच्च न्यायालय ने इस परंपरागत व्यवस्था को एक क्रांतिकारी मोड़ देते हुए कहा कि राष्ट्रपति द्वारा विधेयक को रोके जाने या लौटाए जाने के निर्णय में 'स्पष्ट तर्क' और 'सांविधानिक वैधता' का समावेश अनिवार्य है। यहां वही पुराना प्रश्न फिर से सामने आता है क्या न्यायपालिका को यह अधिकार है कि वह कार्यपालिका को बताए कि उसे कैसे सोचना चाहिए?

समर्थक कहेंगे कि यह फैसला पारदर्शिता की दिशा में साहसिक कदम है। अनिश्चित काल के लिए जब कोई विधेयक रोक दिया जाए, तो क्या यह संघीय ढांचे के सिद्धांतों के विरुद्ध नहीं जाता ? मगर आलोचकों की दृष्टि में यह निर्णय संविधान के मूल ढांचे से विचलन सरीखा है। उनका कहना है, भारतीय संविधान ने राष्ट्रपति को विवेकाधिकार दिया है, न कि न्यायिक निर्देशों के पालन का आदेश न्यायपालिका यदि कार्यपालिका को 'कैसे सोचें' का पाठ पढ़ाने लगे, तो शक्तियों का पृथक्करण सिद्धांत ध्वस्त हो जाएगा। इस बहस में इतिहास के पन्ने हमें दोहरे सबक देते हैं। एक ओर, 1997 का विशाखा मामला है, जहां न्यायपालिका ने यौन उत्पीड़न रोकथाम हेतु दिशा-निर्देश बनाए। कानून या दिशा-निर्देश बनाना विधायिका का काम है, पर इस कदम के समर्थकों का कहना था कि न्यायपालिका ने विधायिका की निष्क्रियता को भरने का काम किया। दूसरी ओर, 1994 का एस आर बोम्मई मामला है, जहां न्यायालय ने राष्ट्रपति शासन के मामलों में हस्तक्षेप करते हुए भी संयम बरता । अनुच्छेद-201 की व्याख्या विशाखा जैसी 'सक्रियता' है या फिर बोम्मई प्रकरण जैसे 'संयम का विस्मरण' ?

आज जब राज्यों और केंद्र के बीच संबंधों में नई टकराहटें उभर रही हैं, तब यह निर्णय संघीय ढांचे के लिए दोहरी चुनौती बनकर आया है। एक तरफ, यह राज्यों को केंद्रीय मनमानी के विरुद्ध कानूनी हथियार देता है, तो दूसरी ओर, केंद्र-राज्य समीकरणों को न्यायालय की चौखट तक खींचकर राजनीतिक विवादों को न्यायीकृत करने का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। जैसे तमिलनाडु और कर्नाटक के जल विवाद को अदालत के बजाय राजनीतिक वार्ता से सुलझाना चाहिए था, वैसे ही विधायी मतभेदों को भी संसदीय संवाद से ही निपटाना चाहिए। अंततः यह निर्णय भारतीय लोकतंत्र की उस आधारभूत उलझन को छूता है, जहां संस्थाएं एक-दूसरे के अधिकार क्षेत्र की रक्षा करने के बजाय रस्साकशी में लगी दिखती हैं। न्यायपालिका का यह कदम पारदर्शिता लाने की दिशा में प्रशंसनीय है, परंतु यदि यह कार्यपालिका के सांविधानिक अधिकार क्षेत्र को कुंद करे, तो यह संतुलन के सिद्धांत के विपरीत होगा। शायद समाधान यही है कि न्यायालय निर्णय देते समय अपने आदेशों को 'सुझाव' के रूप में प्रस्तुत करे, न कि ' अनिवार्य निर्देश' के रूप में ।

भारतीय संविधान की जिस मूल भावना ने न्यायपालिका को 'संविधान का संरक्षक' बनाया था, उसी भावना ने विधायिका को 'जनता की आवाज' और कार्यपालिका को निर्णय की गति' का प्रतीक माना था। इन तीनों की सामूहिक शक्ति ही लोकतंत्र की सफलता है। अनुच्छेद-201 की यह नई व्याख्या तभी सार्थक होगी, जब यह तीनों स्तंभों के बीच संवाद का माध्यम बने, न कि संघर्ष का हथियार ।